प्रवृत्ति, निवृत्ति और हित निर्धारण

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

वृत्ति का अर्थ है कार्य करना। कोई भी कार्य करना वृत्ति कहलाता है। बार–बार यदि उसी कार्य को किया जाता है तो वह प्रवृत्ति कहलाता है। प्रवृत्ति धीरे–धीरे प्रकृति बन जाती है। हमें जीवन का निर्धारण कैसे करना है? जीवन अनेक दृष्टियों से संचालित होता है कुछ लोग प्रवृत्तिमार्गी होते हैं और कुछ लोग निवृत्तिमार्गी। दोनों मार्ग हित निर्धारण में समर्थ है। प्रवृत्तिमार्गी गृहस्थ कहलाता है। संन्यासी निवृत्तिमार्गी कहलाता है। वह परमार्थ का मार्ग जीवन निर्वाह करने के लिए चुनता है। प्रवृत्ति और निवृत्ति कर्मों के भोग से जुड़े हुए है। जैन धर्म में आगार और अनगार धर्मों के रूप में जीवन का विभाजन किया गया है। गृहस्थ आगार धर्म का पालन करता है और साधु अनगारधर्मी होते हैं। सभी व्यक्ति संन्यासी नहीं हो सकते। निवृत्ति मार्ग पर चलना बड़ा कठिन है। अणुव्रत और महाव्रत के रूप में विभाजन करके गृहस्थ के लिए अणुव्रत और साधुओं के लिए महाव्रत का विधान किया गया है। गृहस्थ जीवन प्रवृत्तिमार्गी जीवन है। गृहस्थ जीवन चलाने के लिए विवाह संस्कार का बहुत महत्व है। विवाह पद्धति के द्वारा पति और पत्नी मिलकर गृहस्थ जीवन चलाते हैं और संतानोत्पत्ति के द्वारा वंश वृद्धि होती है। जीवन में अनेक आवश्यकताएं होती हैं। उन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए गृहस्थ को अनेक कार्य करने पड़ते हैं। संन्यासी नौकोटिकत्यागी होता है। वह पूर्ण अहिंसक होता है। कंचनकामिनी का त्यागी होता है।

भारतीय संस्कृति व्रतों की संस्कृति है। यहां के निवासी प्रायः हर महीने कोई न कोई व्रत रखकर आत्मा को शुद्ध करते है। व्रत का मतलब होता है संकल्प। महाव्रत का तात्पर्य है ऐसा व्रत जिसमें किसी प्रकार का अपवाद न हो। निरापद रूप से जिस व्रत का आचरण किया जाता है वहीं महाव्रत कहलाता है। महाव्रत पाँच हैं– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। जैन धर्म का मूलाधार ही अहिंसा है। हिंसा कभी भी धर्म नहीं हो सकती। इस

विराट् विश्व में जितने भी प्राणी हैं, वे चाहे छोटे हों या बड़े हों, पशु हों या मानव हों, सभी जीवित रहना चाहते हैं, कोई भी मरना नहीं चाहता। अहिंसा में सभी प्राणियों के कल्याण की भावना निहित है। मनुष्य हिंसा क्यों करता है? हिंसा का कारण क्या है? इस हिंसा का प्रमुख कारण मानव का अज्ञान है। तत्त्व से अनभिज्ञ होने के कारण मनुष्य विषय, कषाय आदि मानसिक दोषों से पीड़ित है, इसलिए वह हिंसात्मक प्रवृत्ति करता है। भगवान् महावीर ने छह जीवनिकायों की प्ररूपणा की है। इनमें पृथ्वी, अप, तेजस्, वायु, वनस्पति और त्रस की प्ररूपणा की गयी है। जब तक जीव का ज्ञान नहीं होता, तब तक हिंसा से छुटकारा नहीं मिल सकता। द्वितीय महाव्रत के रूप में सत्य की गणना की गयी है। जैसा हुआ है, वैसा ही कहना सत्य का सामान्य लक्षण है, परन्तु अध्यात्म मार्ग में स्व पर अहिंसा की प्रधानता होने से हित व मित वचन को सत्य कहा जाता है। सामान्यतया स्तेय से तात्पर्य है चोरी और अस्तेय का तात्पर्य है चोरी न करना। स्तेय और अस्तेय के अनेक रूप बताए गए हैं। किसी की निन्दा करना, किसी के दोषों को देखना, चुगली करना, अन्य जीवों के प्राणों का अपहरण करना, दूसरे के अधिकार को छीनना, किसी की भावना को ठेस पहुंचाना, किसी के साथ अन्याय करना आदि सभी स्तेय के अन्तर्गत आते हैं। बिना दी गयी वस्तु को स्वयं की इच्छा से उठाना, स्वामी की अनुमति के बिना किसी भी वस्तु को ग्रहण करना, उसका उपभोग एवं उपयोग करना अदत्तादान है। इसे ही चोरी कहते हैं।

ब्रह्मचर्य का अर्थ है–आत्मविद्या या आत्मविद्याश्रित आचरण। ब्रह्मचर्य' शब्द दो शब्दों के योग से बना है–'ब्रह्म' और 'चर्य'। 'ब्रह्म' शब्द के मुख्यतः तीन अर्थ हैं–ब्रह्म=वीर्य, ब्रह्म=आत्मा, ब्रह्म=विद्या। 'चर्य' शब्द के भी तीन अर्थ हैं–'रक्षण, रमण तथा अध्ययन।' इस तरह ब्रह्मचर्य के तीन अर्थ है–वीर्य रक्षण, आत्म–रमण और विद्याध्ययन। केवल वीर्यरक्षा या जननेन्द्रिय विषयक संयम ब्रह्मचर्य का अधूरा अर्थ है। ब्रह्मचर्य का विधेयात्मक रूप तो अपनी आत्मा या परमात्मा की उपासना में लगना है। अपरिग्रह महाव्रत को जानने के लिए परिग्रह को जानना आवश्यक है। परिग्रह का अर्थ है–ममत्व बुद्धि से किसी वस्तु का ग्रहण करना। परिग्रह का अर्थ है–किसी वस्तु का समस्त रूप से ग्रहण करना, अथवा मूर्च्छावश जिसे ग्रहण किया जाता है या अपनेपन–मेरेपन के भाव से यह 'मेरी है', इस बुद्धि से जिसे ग्रहण किया जाय, उसे परिग्रह

कहते हैं। जो व्यक्ति सांसारिक भोगविलास में लिप्त है उसे सत्य का दर्शन नहीं हो सकता। अपरिग्रही पदार्थों में ममत्व नहीं करता। अपरिग्रह के तत्त्व को प्राप्त कर व्यक्ति अपने जीवनदशा का परिवर्तन कर सकता है। जब तक पदार्थ के प्रति मूर्च्छा का भाव दूर नहीं होता, तब तक हिंसा और असत्य का भाव भी दूर नहीं हो सकता। इसी की विशुद्धि के लिए सभी आचार विचार का प्रतिपादन हुआ है। भारतीय संस्कृति में इन पांचों महाव्रतों का विशिष्ट स्थान है। इसकी आराधना करने से मनुष्य मोक्षमार्ग का पथिक बन जाता है और उसका जीवन निर्द्वन्द्व रूप से व्यतीत होता है। प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग जीवन संचालन के लिए है। वैदिक धर्म प्रवृत्तिमार्गी है और जैनधर्म निवृत्तिमार्गी। वैदिक धर्म में पूजा–पाठ, कर्म–कांड, आचार–विचार को बहुत महत्व दिया गया है। इसलिए इसे प्रवृत्तिमार्गी कहा जाता है। जैन धर्म में कर्म–कांड को ज्यादा महत्व नहीं दिया गया है। अतः जैन और बौद्ध धर्म दोनों निवृत्तिमार्गी धर्म हैं। इस धर्म में पदे–पदे कर्मकांड विरोध है। दोनों धर्मों में मोक्ष को जीवन का अन्तिम लक्ष्य माना गया है।